क्या खूबसूरती यौनिकता का प्रतिबिम्ब है?

नंदनी राव

हाल ही में दिल्ली *के अखबार में एक रिपोर्ट छपी थी 'दिल्ली के युवा स्कूल की छुट्टियों का उपयोग कॉस्मेटिक सर्जरी कराने के लिए करते हैं।' युवा अपना ग्रीष्मकालीन अवकाश 'प्रसाधन चिकित्सा' कराने और उससे उबरने के लिए कर रहे हैं। इस लेख में कुछ अन्य बौखला देने वाले तथ्य भी दर्ज थे। इस चिकित्सा को कराने वाली लड़कियों-लड़कों का अनुपात 70:30 था। चिकित्सा का खर्च बीस हज़ार रुपयों से शुरू होता है। इस सूची में लेज़र के ज़रिए बालों की सफाई, लिपोसक्शन के माध्यम से मांस घटाना, रीनोप्लास्टी अर्थात नाक बेहतर बनाना, स्तन का माप घटाना-बढ़ाना इत्यादि शामिल हैं। इस रिपोर्ट का सबसे बौखला देने वाला पहलू है इस चिकित्सा को कराने के लिए लड़कियों को माता-पिता से मिलने वाला प्रोत्साहन। इसके बावजूद कि इस तरह की चिकित्सा करने वाले डाक्टर परिवार को युवाओं व बच्चों पर इस तकनीक के दुष्प्रभावों से परिचित करा देते हैं। कुछ दिनों पहले अखबार में एक अन्य खबर छपी थी जिसने दुनिया भर में हलचल मचाई थी। इंग्लैंड में एक नौ साल की लड़की को बोटोक्स के इंजेक्शन उसकी माता-पिता की मर्ज़ी पर नियमित रूप से लगाये जा रहे थे। इससे इस बच्ची को सौंदर्य प्रतियोगिताओं में अपनी हम उम्र लड़कियों से अधिक फायदा मिलेगा।*

ये तमाम किस्से हमारे सामने कुछ सवाल खड़े करते हैं। वह कौन सा कारण है जो इन लड़के-लड़कियों के यह चिकित्सा कराने के लिए प्रेरित करता है? आम लोगों में शरीर के 'दोषों' को 'ठीक कराने' का जुनून क्यों सवार है? क्या चपटी नाक, छोटी आंखों और थुलथुल पेट का मांस यौनिकता पर सवाल उठाता है? एक समय था जब उम्रदराज़ औरतें बुढ़ापे की झुर्रियां और 'कमियां' छुपाने के लिए प्रसाधन चिकित्सा का सहारा लेती थीं। पर अब उम्र का इस बात से कोई लेना-देना नहीं है। आजकल टीवी पर एक उम्र-विरोधी 'एंटी-एजिंग' क्रीम का इश्तहार दिखाया जा रहा है जिसमें एक तीस साल की औरत एक खास ब्रांड की क्रीम इस्तेमाल करती है और उसकी सहेली को लगता है कि इतनी छोटी उम्र में यह क्रीम गैर उपयोगी है। पर पांच वर्ष बाद दोबारा मिलने पर क्रीम लगाने वाली सहेली की जवान, दाग-धब्बे रहित त्वचा दूसरी औरत के लिए ईर्ष्या का विषय बन जाती है। विज्ञापन में उस औरत की अपनी त्वचा झुर्रियों से भरी और रूखी-बेजान दिखाई गई है। जवान दिखने वाली सहेली उसे यह सलाह देती है कि अभी देर नहीं हुई है, वह इस ब्रांड की क्रीम का इस्तेमाल करके अपना लावण्य वापस पा सकती है। विज्ञापन के ज़रिये यह दर्शाया गया है कि अब दोनों महिलाएं इस क्रीम का उपयोग करके झुर्रियों-रहित त्वचा अर्थात खूबसूरत चेहरे पा सकती हैं।

'खूबसूरती' एक अजीब सी सनक है। क्या मैं जवान, दुबली और गोरी हूं? मेरी लम्बाई सही तो है न। कहीं मैं ज़्यादा ठिगनी या लम्बी तो नहीं? मेरे चेहरे के हिसाब से मेरी आंखों का माप ठीक है न? क्या मेरे दांत ओढ़े-तिरछे हैं और उन्हें सीधा कराने की ज़रूरत है? क्या मेरे चेहरे पर कोई निशान या बदनुमा नाक, होंठ हैं जिनको सर्जरी से ठीक कराना चाहिए? अरे, पर मैं अपने स्तनों के लटकने को रोकने के लिए क्या करूंगी?

पिछले कुछ सालों से, दुनिया भर में 'खूबसूरती' का एक समरूपी मानक बनाने के प्रयास किए गए हैं। उम्र, लम्बाई, वज़न, रंग का एक वैश्विक 'आदर्श' भी स्थापित हुआ जिसका नस्ल, या शरीर के प्राकृतिक फ़र्क़ों के कानून से कोई लेना-देना नहीं है। कुछ समय तक खूबसूरती उद्योग से संबंद्ध लोग ही इन वैश्विक मानकों से 'पीड़ित' थे। हमने

कई अभिनेता/अभिनेत्रियों व मॉडलों को देखा है जिन्होंने अपनी ठोड़ी के लटकते मांस को 'कसवाया' है या फिर एक बाल को वापस 'उगवाया' है! और हम इन लोगों के 'दंभ' की बातें सुनकर ठहाके मारते और भूल जाते।

पर आज की स्थिति अलग है, और साथ ही गंभीर भी। आज हम बाज़ार में उपलब्ध शरीर का मांस कम करवाने के लिए किए गए 'लिपोसक्शन' या 'बोटोक्स पाउट' व 'नई वक्र' नाक पर हंसते नहीं हैं बल्कि हम भी ऐसा करना चाहते हैं।

नारीवादी फ़िल्मकार जीन किलबॉर्न अपने वृत्तचित्र *'स्टिल किलिंग अस सॉफ़्टली'* में विज्ञापनों में दिखाई जाने वाली खूबसूरत तस्वीरों का ज़िक्र करती हैं। उसका कहना है कि उत्पादनों के साथ-साथ मीडिया मूल्य, छवियां, आकांक्षाओं तथा प्यार, यौनिकता व 'सामान्यता' के सिद्धांत भी बेचता है तथा यह भी परिभाषित करता है कि हम क्या बनने तथा कैसा दिखने की ख्वाहिश रखते हैं।

हमें यह स्वीकारना होगा कि विज्ञापनों से अधिक मुनाफ़ों के दौर में कुछ अलग या 'हटके' को मानना मुश्किल है। हमारे चारों तरफ हैं— विज्ञापनों की बढ़ती तादात, बड़े-बड़े बोर्ड, होर्डिंग, पत्रिकाओं में छपे, टीवी पर प्रसारित होते विज्ञापन और ये सभी गोरी, नाजुक, जवान, दुबली लड़की की विशेषताओं का गुणगान कर रहे हैं। शुरूआत तो 1990 में 'नई भारतीय सुन्दर युवती' के मिस यूनिवर्स बनने से मची धूम से ही हो गई थी, जिससे प्रसाधन उद्योग के लिए पीछे मुड़कर देखना गैर ज़रूरी हो गया।

रही बात मानव जाति की तो उनका क्या? जब प्रकृति ने ही हमारा साथ छोड़ दिया हो तो क्या अपने ख्वाबों की पूर्ति के लिए हम कोई दूसरा रास्ता इख्तियार नहीं करेंगे? हमें 'असेंबली लाईन' साधन भी मंजूर हैं 'अगर वे मुझे मेरे ख्वाबों की मलिका बने रहने में मदद करते रहें।' फिर चाहे हम इन साधनों के इस्तेमाल से होने वाले दुष्प्रभावों पर कितनी ही खबरें पढ़ें- 'ग्लूटिओप्लास्टी' से अपने नितबों की गोलाई ठीक कराने में की कई गलत सजर्री से हुई सुंदरी की मौत पर छपी सच्चाई हो या युवाओं में 'खतरनाक' जीवनशैली से होने वाली बुलिमिया व अनोरेक्सिया जैसी बीमारियों अथवा बोटोक्स रोपण के नकारात्मक दुष्प्रभाव पर प्रसारित जानकारी हो। कोई भी बात हमारे खुद को देखने के नज़रिए में बदलाव नहीं ला सकती। जब बोटोक्स चेहरे की अनचाही लकीरों और झुर्रियों को कम करने का वादा कर रहा हो तो उसके ज़हरीलेपन से नसों पर होने वाली समस्याओं पर कौन जानकारी चाहेगा? कौन जानना चाहेगा कि शरीर की मांसपेशियों में कमज़ोरी, आंखों की धुंधली रोशनी और मूत्राशय पर नियंत्रण खत्म हो जाने की संभावना इन तरीकों के उपयोग से बढ़ती है? अच्छे समय पर 'दंभ' और बुरे समय पर 'खुद को धोखा देना' इंसानी फितरत है। जो हम देखना न चाहें उस पर पर्दा डाल देना सबसे आसान होता है।

पर यौनिकता की अभिव्यक्ति अनेकों रूपों में होती है। नाचना, खास तरीके से अपने शरीर को मोड़ना, बल खाना, हमारी चाल-ढाल सभी हमारी यौनिकता की अभिव्यक्ति में मदद करते हैं।

सवाल यह है कि हमारी विविधता और फ़र्क़ कहां खो गये हैं? क्यों गोरे रंग की लालिमा ही हमें सुन्दर लगती है? चेहरे की झुर्रियों में हमें जीवन के अनुभवों की छाप और बीते हुए कल की झलक की जगह दोष व त्रुटियां क्यों नज़र आती है? मोटा होना क्यों- कब एक विशेषण से गाली बन गया है? हमें यह सब पता ही नहीं चला।

वास्तव में अच्छा महसूस करने के लिए हमें क्या करने की ज़रूरत हैं— शारीरिक व्यायाम, खेल, वर्जिश या फिर खान-पान पर ध्यान? पानी पीने से शरीर के जीव-विष बाहर निकालने की क्षमता का विकास या त्वचा और शरीर को फायदे पहुंचाने वाले घरेलू नुस्खों पर भरोसा? कहने का मतलब यह नहीं कि हमें प्रसाधनों का उपयोग एकदम बंद कर देना चाहिए। ऐसा बिल्कुल भी नहीं। हम जब चाहें उनका इस्तेमाल करें। आत्म-गरिमा की रंगत चेहरे पर खिल जाती है और आत्म-विश्वास से भी चाल और ठवन हमें आकर्षक बनाती है। सही मायने में यही यौनिकता की अभिव्यक्ति है।

अंत में मैं यही कहना चाहूंगी- खूबसूरती एक घिसा-पिटा जुमला नहीं है। यह एक सूक्ति है जिसे हमें याद रखना है और जिस पर गहन चिन्तन भी करना है। आखिर खूबसूरती देखने वाले नज़र में होती है और यहां यह नज़र हमारी है। आत्म-आलोचना अच्छी होती है पर खुद को प्यार करना भी बहुत ज़रूरी है।